लोहारवंश के राजाओं में कलश के पुत्र हर्ष का नाम इस दृष्टि से उल्लेखनीय है कि वह स्वयं विद्वान, कवि तथा कई भाषाओं तथा विद्याओं का ज्ञाता था। कल्हण उसका आश्रित कवि था। अपनी विद्वता के कारण वह दूसरे राज्यों में भी प्रसिद्ध हुआ परन्तु शासक के रूप में वह क्रूर तथा अत्याचारी था। कल्हण उनके अत्याचारों का वर्णन करता है। वह सुख-सुविधाओं तथा शान-शौकत पर पानी की तरह धन बहाता था। उसकी फिजूलखर्ची के परिणामस्वरूप राज्य में आर्थिक संकट उत्पन्न हो गया जिसको दूर करने के लिये हर्ष ने प्रजा पर भारा-भारी कर लगाये तथा बलपूर्वक उन्हें वसूल करवाया। इन सबका फल यह हुआ कि सामन्तों ने लोहारवंश के उच्छल तथा सुस्सल नामक दो भाइयों के नेतृत्व में विद्रोह का झण्डा खड़ा कर दिया। चतुर्दिक् अशान्ति और अव्यवस्था फैल गयी जिसको दबाने के प्रयास में हर्ष 1101 ईस्वी में मार डाला गया।

हर्ष की मृत्यु के बाद कश्मीर का इतिहास अराजकता, अव्यवस्था एवं षड्यन्त्रों का इतिहास है। राजतरंगिणी में उच्छल, सुस्सल, भिक्षाचर तथा जयसिंह आदि राजाओं के नाम ज्ञात होते हैं। जयसिंह इस वंश का अन्तिम शासक था जिसने 1128 ईस्वी से 1155 ईस्वी तक शासन किया। उसने यवनों को पराजित किया। कल्हण की राजतरंगिणी का विवरण जयसिंह के शासन के साथ ही समाप्त हो जाता है। इसके बाद लगभग दो शताब्दियों तक कश्मीर में हिन्दू शासन चलता रहा। अन्ततोगत्वा 1339 ईस्वी में वहाँ मुस्लिम-शासन की स्थापना हुई।

बंगाल का पाल राजवंश

इतिहास के साधन

पालवंश का इतिहास हमें साहित्य तथा उसके अनेक अभिलेखों से ज्ञात होता है। इस वंश के प्रमुख लेख है—

1. धर्मपाल का खालीमपुर लेख।
2. देवपाल का मुंगेर लेख।
3. नारायणपाल का भागलपुर ताम्रपत्राभिलेख।
4. नारायणपाल का बादल स्तम्भ लेख।
5. महीपाल प्रथम के बानगढ़, नालन्दा तथा मुजफ्फरपुर से प्राप्त लेख।

उपर्युक्त लेखों के अतिरिक्त अन्य अनेक लेख भी प्राप्त हुए हैं। इनसे पालवंश की उत्पत्ति तथा उपलब्धियों पर प्रकाश पड़ता है। समकालीन गुर्जर-प्रतिहार तथा राष्ट्रकूट लेखों से पालों का इन राजवंशों के साथ सम्बन्ध ज्ञात होता है। इस काल के ग्रन्थों में सन्ध्याकर नन्दीकृत 'रामचरित' का प्रमुख रूप से उल्लेख किया जा सकता है जिससे इस वंश के शासक रामपाल की उपलब्धियों का ज्ञान प्राप्त होता है।

उत्पत्ति तथा राजनैतिक इतिहास

शशांक की मृत्यु के पश्चात् (637 ईस्वी) लगभग एक शताब्दी तक बंगाल में अराजकता और अव्यवस्था का वातावरण व्याप्त रहा। आठवीं शताब्दी ईस्वी के मध्य अशान्ति एवं अव्यवस्था से ऊब कर बंगाल के प्रमुख नागरिकों ने गोपाल नामक एक सुयोग्य सेनानायक को अपना राजा बनाया। गोपाल ने जिस नवीन राजवंश की स्थापना की उसे 'पालवंश' कहा जाता है। यह एक क्षत्रिय राजवंश था जिसने बंगाल में लगभग चार वर्षों तक राज्य किया। इस दीर्घकालीन शासन में राजनीतिक तथा सांस्कृतिक दोनों ही दृष्टियों से बंगाल की अभूतपूर्व प्रगति हुई।

गोपाल

पालवंश के संस्थापक गोपाल के प्रारम्भिक जीवन तथा कार्यों के विषय में हमें बहुत कम पता है। उसका पितामह दयितविष्णु एक विद्वान् था तथा उनका पिता वप्यट एक योग्य सैनिक था। धर्मपाल के खालीमपुर लेख में कहा गया है कि 'मात्स्यन्याय से छुटकारा पाने के लिये प्रकृतियों (सामान्य जनता) ने गोपाल को लक्ष्मी की बाँह ग्रहण कराई।'[1] तिब्बती इतिहासकार तारानाथ ने भी इस विवरण की पुष्टि की है। गोपाल ने बंगाल में शान्ति और सुव्यवस्था स्थापित की तथा अपने शासन के अन्त तक सम्पूर्ण बंगाल पर अपना अधिकार सुदृढ़ कर लिया। देवपाल के मुंगेर लेख में वर्णन मिलता है कि गोपाल ने समुद्रतट तक की पृथ्वी की विजय की थी किन्तु यह विवरण मात्र आलंकारिक प्रतीत होता है। वर्तमान स्थिति में हम गोपाल की राजनैतिक उपलब्धियों के विषय में निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कह सकते। वह बौद्ध मतानुयायी था तथा नालन्दा में उसने एक विहार का निर्माण करवाया था। गोपाल ने लगभग 750 ईस्वी से 770 ईस्वी तक शासन किया।

[1] मात्स्यन्यायमपोहितुं प्रकृतिभिर्लक्ष्याः करंग्राहितः ।
श्रीगोपाल इतिक्षितीशशिरसां चूणामणिस्तत्सुतः ।।

गोपाल के पश्चात् उसका पुत्र और उत्तराधिकारी धर्मपाल (770–810 ईस्वी) पालवंश का राजा हुआ। इस समय उत्तर भारत का राजनैतिक वातावरण बड़ा विक्षुब्ध था। राजपूताना तथा मालवा में गुर्जर-प्रतिहार वंश की स्थापना हो चुकी थी तथा इस वंश का शासक वत्सराज पूर्व की ओर अपने साम्राज्य का विस्तार कर रहा था। दक्षिण में राष्ट्रकूट शक्तिशाली थे और उनकी लोलुप दृष्टि कन्नौज पर गड़ी हुई थी। धर्मपाल को इन दोनों शक्तियों के साथ संघर्ष करना पड़ा। सर्वप्रथम उसका प्रतिहार नरेश वत्सराज से युद्ध हुआ जिसमें उसकी पराजय हुई। राधनपुर लेख से इस बात की सूचना मिलती है जिसके अनुसार वत्सराज ने धर्मपाल को हराकर उसके दो श्वेत राजछत्रों को ग्रहण कर लिया था। परन्तु वत्सराज को राष्ट्रकूट ध्रुव ने हरा दिया और वह डरकर राजपूताना के रेगिस्तान की ओर भाग गया। ध्रुव ने धर्मपाल को पराजित किया और फिर दक्षिण लौट गया। राष्ट्रकूट-आक्रमण का प्रभाव धर्मपाल पर बहुत कम पड़ा और उसने शीघ्र ही अपनी शक्ति संगठित कर अपने को सम्पूर्ण उत्तर भारत का स्वामी बना लिया।

सर्वप्रथम धर्मपाल ने कन्नौज पर आक्रमण कर वहाँ वत्सराज द्वारा मनोनीत शासक इन्द्रायुध को हराया तथा अपनी ओर से वहाँ चक्रायुध को राजा बनाया। उसने कन्नौज में एक बड़ा दरवार किया जिसमें भोज, मत्स्य, मद्र, कुरु, यदु, यवन, अवन्ति, गन्धार तथा कीर के शासकों ने भाग लिया।[1] उसकी इस विजय का उल्लेख खालीमपुर तथा भागलपुर के लेखों में मिलता है। किन्तु हम निश्चयपूर्वक नहीं कह सकते कि कन्नौज के दरवार में उपस्थित शासकों को उसने किसी युद्ध में जीता अथवा उन्होंने धर्मपाल की शक्ति के डर से ही उसकी अधीनता मान ली थी। इससे ऐसा निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि धर्मपाल कुछ समय के लिये उत्तर भारत का सार्वभौम शासक वन बैठा। उसका साम्राज्य सम्पूर्ण बङ्गाल और बिहार में विस्तृत हो गया तथा कन्नौज का राज्य उसके नियन्त्रण में आ गया। तिब्वती इतिहासकार तारानाथ के अनुसार धर्मपाल का साम्राज्य बंगाल की खाड़ी से लेकर दिल्ली तक तथा जालंधर से लेकर विन्ध्यपर्वत तक फैल गया था। ग्यारहवीं शती के गुजराती कवि सोड्ढल ने धर्मपाल को 'उत्तरापथस्वामी' की उपाधि से सम्बोधित किया है।

ऐसा प्रतीत होता है कि धर्मपाल जीवनपर्यन्त अपने साम्राज्य को अक्षुण्ण नहीं रख सका तथा प्रतिहारों ने धर्मपाल की सत्ता को पुनः चुनौती दी। वत्सराज के पुत्र तथा उत्तराधिकारी नागभट्ट द्वितीय ने पुनः अपनी शक्ति संगठित की। उसने कन्नौज पर आक्रमण कर वहाँ अपना अधिकार दृढ़ किया तथा चक्रायुध को भगा दिया। तत्पश्चात मुंगेर के समीप एक घमासान युद्ध में उसने धर्मपाल को बुरी तरह परास्त किया। परन्तु अपने पिता के ही समान नागभट्ट भी अपनी साम्राज्यवादी आकांक्षाओं की पूर्ति नहीं कर सका। राष्ट्रकूट नरेश गोविन्द तृतीय ने पुनः उस पर आक्रमण कर उसे परास्त किया। धर्मपाल तथा चक्रायुध ने भी गोविन्द की अधीनता मान ली। गोविन्द तृतीय के वापस लौटने के वाद धर्मपाल ने पुनः अपनी खोई हुई शक्ति और प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली। अन्त तक वह एक विस्तृत साम्राज्य का शासक वना रहा। उसके अधीन बङ्गाल का राज्य अचानक उत्तर भारत का सर्वाधिक महत्वपूर्ण राज्य बन गया।[2] अपनी महानता के अनुरूप उसने परमेश्वर, परमभट्टारक, महाराजाधिराज जैसी उपाधियाँ ग्रहण किया। इस प्रकार धर्मपाल अपने समय का एक महान शासक था।

धर्मपाल एक उत्साही बौद्ध था। उसके लेखों में उसे 'परमसौगत' कहा गया है। उसने विक्रमशिला तथा सोमपुरी (पहाड़पुर) में प्रसिद्ध विहारों की स्थापना की। उसकी राजसभा में प्रसिद्ध बौद्ध लेखक हरिभद्र निवास करता था। तारानाथ के अनुसार उसने 50 धार्मिक विद्यालयों की स्थापना करवायी थी। किन्तु राजा के रूप में उसमें धार्मिक असहिष्णुता एवं कट्टरता नहीं थी। खालीमपुर लेख में उसे सभी सम्प्रदायों विशेष रूप से ब्राह्मणों का आदर करने वाला कहा गया है। उसने भगवान मन्ननारायण के मन्दिर के निर्वाह के लिये चार ग्राम दान में दिये थे। भागलपुर लेख से पता चलता है कि वह एक कुशल तथा न्यायप्रिय शासक था जिसने अपनी प्रजा पर उचित कर लगाये थे। वह शास्त्रों का ज्ञाता था तथा सभी जाति के लोगों का सम्मान करता था।

देवपाल (810–850 ईस्वी)

धर्मपाल की मृत्यु के वाद उसका सुयोग्य पुत्र देवपाल पालवंश की गद्दी पर बैठा। खालीमपुर लेख से पता चलता है कि त्रिलोचनपाल नामक उसका एक बड़ा भाई भी था। किन्तु धर्मपाल के जीवन-काल में ही उसकी मृत्यु हो चुकी थी।

[1] भोजैर्मत्स्यैः समुद्रैः कुरुयदुयवनावन्तिगान्धारकीरैर्भूपैर्व्या लालमौलिप्रणतिपरिणतैः साधुसंगीर्यमाणः ।
हृष्यत्पंचालवृद्धोद्धतकनकमयस्वाभिषेकोदकुम्भोदत्तः श्रीकान्यकुब्जस्सललितचलतिभूलतालक्ष्मयेन ।। —खालीमपुर का

[2] Bengal, which had lost all political homogeneity and had almost been eliminated as a factor in Indian p suddenly emerged under him as the most powerful State in Northern India.

—द एज ऑफ इम्पीरियल कन्नौ

देवपाल धर्मपाल की राष्ट्रकूटवंशीया पत्नी रन्नादेवी से उत्पन्न हुआ था। देवपाल ने अपने पिता के ही समान परमेश्वर, परमभट्टारक, महाराजाधिराज जैसी उच्च सम्मानपरक उपाधियाँ धारण कीं। वह पालवंश का सबसे अधिक शक्तिशाली शासक था। उसने न केवल अपने पिता के साम्राज्य को सुरक्षित रखा, अपितु उसे विस्तृत भी किया। मुंगेर लेख से पता चलता है कि उसने विन्ध्यपर्वत तथा कम्बोज तक सैनिक अभियान किया। नारायणपाल के समय के बादल लेख से देवपाल की विजयों पर कुछ प्रकाश पड़ता है। बताया गया है कि उसका योग्य अमात्य दर्भपाणि था जो धर्मपाल के अमात्य वीरदेव का पुत्र था। उसकी कूटनीति ने 'रेवा (नर्मदा) के पिता विन्ध्याचल तथा गौरी के पिता हिमांचल के बीच बसे हुए पश्चिमी समुद्र (अरब सागर) से पूर्वी समुद्र (बंगाल की खाड़ी) तक के सम्पूर्ण क्षेत्र को देवपाल का करद बना दिया था।'[1] इसी लेख में आगे बताया गया है कि उसने उत्कलों को उखाड़ फेंका, हूणों के गर्व को चूर्ण किया तथा द्रविड़ और गुर्जर राजाओं के अभिमान को बिदीर्ण कर समुद्रों से घिरी हुई समस्त पृथ्वी पर शासन किया (उत्कीलितोत्कलकुलं हृतहूणगर्वखर्वीकृतद्रविडगुर्ज्जरनाथदर्पम्)।' भागलपुर लेख में कहा गया है कि देवपाल के भाई तथा सेनापति जयपाल के सामने उत्कल का राजा अपनी राजधानी छोड़कर भाग गया तथा असम-नरेश ने उसकी आज्ञा का पालन करते हुए अपने राज्य का शासन किया।[2] इन विवरणों को हम कोरी कल्पना नहीं मान सकते। ज्ञात होता है कि इस समय राष्ट्रकूट तथा प्रतिहार दोनों ही निर्बल पड़ गये थे। गोविन्द की मृत्यु के बाद राष्ट्रकूट राज्य में आन्तरिक कलह उत्पन्न हो गया जिससे वे उत्तर की ओर से उदासीन हो गये। प्रतिहारवंश में नागभट्ट का उत्तराधिकारी रामभद्र निर्बल शासक हुआ। ऐसी परिस्थिति में देवपाल को अपनी शक्ति के विस्तार का सुनहला अवसर मिला और उसने स्थिति का भरपूर लाभ उठाया था। उसने गुर्जर-प्रतिहार वंश के रामभद्र तथा भोज को पराजित किया था और इस प्रकार उत्तरी भारत में अपना प्रभुत्व कायम रखा। बादल लेख के हूणों से तात्पर्य संभवतः मालवा के हूणों से है। लेखों में मालवा के 'हूणमण्डल' का उल्लेख मिलता है। तिब्बती लेखक तारानाथ भी देवपाल द्वारा उड़ीसा की विजय की बात पुष्ट करता है। देवपाल ने जिस उत्कल राजा को जीता वह संभवतः करवंशी शिवकर द्वितीय था। द्रविड़ नरेश की पहचान संदिग्ध है। अल्तेकर द्रविड़ की पहचान राष्ट्रकूटों से करते हुए यह प्रतिपादित करते है कि देवपाल ने राष्ट्रकूट नरेश अमोघवर्ष के ऊपर आक्रमण कर उसे परास्त किया था। किन्तु यह समीकरण तर्कसंगत नहीं लगता क्योंकि तत्कालीन लेखों में द्रविड़ तथा राष्ट्रकूट का उल्लेख पृथक्-पृथक् मिलता है। बी० पी० सिनहा द्रविड़ की पहचान काञ्ची के पल्लवों से करते हैं जो उचित लगता है। देवपाल के मुंगेर लेख से पता चलता है कि उसने सेतुबन्ध रामेश्वरम् तक के प्रदेश पर शासन किया था। इससे ऐसा लगता है कि उत्कल अभियान के बाद उसने सुदूर दक्षिण में जाकर काञ्ची के पल्लवों को भी नतमस्तक किया है। उसके सुदूर दक्षिण में अभियान का उद्देश्य राष्ट्रकूटों को उनकी सीमा में रहने के लिये विवश करना प्रतीत होता है।[3] देवपाल द्वारा पराजित कामरूप का शासक भास्करवर्मा कोई निर्बल उत्तराधिकारी रहा होगा।

इस प्रकार देवपाल अपने वंश का महानतम शासक था जिसके नेतृत्व में पाल साम्राज्य अपने उत्कर्ष की पराकाष्ठा पर पहुँच गया। पाल इतिहास में यह पहला अवसर था जबकि उसका प्रभाव असम, उड़ीसा तथा सुदूर दक्षिण में व्याप्त हो गया। अपने जीवनपर्यन्त उसने इस विस्तृत साम्राज्य पर शासन किया। प्रशासन के कार्यों में उसने अपने योग्य तथा अनुभवी मन्त्रियों दर्भपाणि और केदार मिश्र से पर्याप्त सहायता प्राप्त की थी जबकि उसका चचेरा भाई जयपाल उसकी सैनिक विजयों में प्रमुख सहायक था।

अपने पिता की भाँति देवपाल भी बौद्ध मतानुयायी था। लेखों में उसे भी 'परमसौगत' कहा गया है। तारानाथ उसे बौद्ध धर्म की पुनः स्थापना करने वाला कहता है। उसने बौद्ध विहारों के निर्माण में योगदान दिया। कुछ विद्वानों के अनुसार उसने ओदन्तपुरी (बिहार) के प्रसिद्ध बौद्धमठ का निर्माण करवाया था। जावा के शैलेन्द्रवंशी शासक बालपुत्रदेव के अनुरोध पर देवपाल ने उसे नालन्दा में एक बौद्ध विहार बनवाने के लिये पाँच गाँव दान में दिया था। उसने नगरहार (जलालाबाद) के प्रसिद्ध विद्वान् वीरदेव का सम्मान किया तथा उन्हें नालन्दा महाविहार का अध्यक्ष बनाया। नालन्दा तथा उसके सीमावर्ती क्षेत्र से उसके समय के अनेक लेख प्राप्त होते हैं जो उसके नैष्ठिक बौद्ध होने का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। उसका चालीस वर्षों का शासन बंगाल के इतिहास में शान्ति एवं समृद्धि का काल रहा।

[1] आरेवाजनकान्मतंगजमदस्निम्यच्छिलासंहतेरागौरीपितुरीश्वरेन्दुकिरणैः पुष्यत्सितिम्नोगिरेः ।
मार्तण्डास्तमयोदयारुण जलादावारिराशिद्वयान्नीत्यायस्यभुवं चकारकरदांश्रीदेवपालोनृपः ।। —बादल स्तम्भलेख

[2] यस्मिन भ्रातुर्निदेशाद्बलवति परित प्रस्थिते जेतुमाशा सीदन्नाम्नैवदूरान्निजपुरमजहा...
राजा प्राग्ज्योतिषाणामुपशमित...

धर्मपाल तथा देवपाल का शासन-काल बंगाल के इतिहास में सर्वाधिक गौरवशाली युग का निर्माण करता है। ब्रिटिश काल तक भारतीय राजनीति में इसके पूर्व अथवा बाद में कभी भी बंगाल का इतना अधिक महत्व नहीं रहा।[1]

देवपाल के उत्तराधिकारी तथा पाल-साम्राज्य का विनाश

देवपाल का शासन-काल पाल-शक्ति के चर्मोत्कर्ष को व्यक्त करता है। इसके बाद पाल साम्राज्य की अवनति प्रारम्भ हुई। देवपाल का उत्तराधिकारी विग्रहपाल (850-854 ईस्वी) हुआ जिसने अल्पकालीन शासन के बाद अपने पुत्र नारायणपाल के पक्ष में सिंहासन त्याग कर संन्यास ग्रहण कर लिया। नारायणपाल की भी सैनिक जीवन की अपेक्षा साधु जीवन व्यतीत करने में अधिक रुचि थी। इन दोनों नरेशों के निर्बल शासन-काल में प्रतिहारों को पालों के विरुद्ध महत्वपूर्ण सफलता प्राप्त हुई। प्रतिहार शासक भोज तथा महेन्द्रपाल ने इन्हें पराजित कर पूर्व की ओर अपना साम्राज्य विस्तृत किया। महेन्द्रपाल के समय में तो मगध तथा उत्तरी बंगाल के ऊपर प्रतिहारों का अधिकार स्थापित हो गया। इसके अतिरिक्त असम और उड़ीसा के सामन्त शासकों ने अपनी-अपनी स्वतन्त्रता घोषित कर दी। इस प्रकार नारायणपाल का राज्य केवल बङ्गाल के एक भाग में संकुचित हो गया। परन्तु अपने शासन के अन्त तक उसने किसी प्रकार मगध तथा उत्तरी बंगाल पर पुनः अपना अधिकार स्थापित कर सकने में सफलता प्राप्त कर लिया। उसकी मृत्यु 908 ईस्वी के लगभग हुई।

908 ईस्वी से 988 ईस्वी तक के 80 वर्षों के समय में तीन राजाओं—राज्यपाल, गोपाल द्वितीय तथा विग्रहपाल द्वितीय—ने पालवंश में शासन किया। इन राजाओं के काल में पाल-शक्ति का उत्तरोत्तर ह्रास होता गया। बंगाल के पाल राज्य के भीतर ही दो स्वतन्त्र वंशों ने अपनी सत्ता स्थापित की—पश्चिमी बंगाल में कम्बोज तथा पूर्वी बंगाल में चन्द्र वंश। विग्रहपाल द्वितीय के समय तक आते-आते पालों का बंगाल पर से शासन समाप्त हो गया तथा अब पालवंशी शासक केवल बिहार में शासन करने लगे। इस प्रकार पाल साम्राज्य लगभग समाप्त-प्राय होने वाला था कि इस वंश की गद्दी पर महीपाल प्रथम जैसा एक शक्तिशाली शासक आसीन हुआ। महीपाल पुनः अपने वंश की लुप्त हुई प्रतिष्ठा स्थापित करने में जुटा। उसने शीघ्र ही बंगाल के विद्रोहियों का दमन कर सम्पूर्ण उत्तरी तथा पूर्वी बंगाल को जीत लिया। उसने कम्बोजों को बंगाल से बाहर निकाल दिया। उत्तरी बंगाल के वानगढ़ से उसके शासन-काल के नवें वर्ष का लेख मिला है जिसमें कहा गया है कि महीपाल ने 'अपने सभी शत्रुओं को मारकर उनसे अपना पैतृक राज्य पुनः छीन लिया ... अपना अधिकार न होते हुए भी अपने बाहुबल के गर्व से उस पर अधिकार कर लिया था।' उत्तरी तथा दक्षिणी बिहार से भी महीपाल के शासन-काल के कई लेख मिलते हैं जो उन भागों पर उसके अधिकार की पुष्टि करते हैं। पता चलता है कि अपने शासन-काल के अन्त में उसने अंग को भी जीत लिया था। सारनाथ लेख (1026 ईस्वी) काशी क्षेत्र पर उसके अधिकार का सूचक है। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि महीपाल प्रथम देवपाल के पश्चात् पालवंश का सर्वाधिक शक्तिशाली राजा सिद्ध हुआ। 1023 ईस्वी के लगभग उसे राजेन्द्र चोल प्रथम के हाथों पराजित होना पड़ा, परन्तु इससे उसकी कोई विशेष क्षति नहीं हुई। इस प्रकार अपनी विजयों द्वारा महीपाल ने अपने प्राचीन राज्य के अधिकांश स्थानों को पुनः अपने अधिकार में कर लिया जिसके परिणामस्वरूप दसवीं शती के अन्त में बङ्गाल का पाल राज्य पुनः पूर्वी भारत का अत्यन्त शक्तिशाली राज्य बन गया। महीपाल ने 1038 ईस्वी तक शासन किया। उसने अनेक मन्दिर तथा विहार बनवाये थे। उसके शासन-काल में बौद्ध धर्म को पुनः प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त हो गया।

महीपाल की मृत्यु के बाद पालवंश की अवनति प्रारम्भ हुई। उसका उत्तराधिकारी जयपाल (1038-1055 ईस्वी) हुआ। उसे कलचुरि-चेदि नरेश कर्ण ने पराजित किया। इसके बाद उसका पुत्र विग्रहपाल तृतीय (1055-1070 ईस्वी) राजा बना। वह अपने राज्य को कलचुरि तथा चालुक्य आक्रमणों से सुरक्षित रख सकने में सफल रहा। उसका विवाह कलचुरि नरेश कर्ण की कन्या यौवनश्री के साथ हुआ था। विग्रहपाल के बाद उसके तीन पुत्रों—महीपाल द्वितीय, शूरपाल तथा रामपाल—के बीच संघर्ष हुए। महीपाल ने अपने दोनों भाईयों को कारागार में डाल दिया। उसके समय में अशान्ति तथा अव्यवस्था बनी रही। चाशिकैवर्त (माहिष्य) जाति के लोगों ने अपने नेता दिव्य (दिव्योक) के नेतृत्व में विद्रोह किया। उन्होंने महीपाल की हत्या कर दी तथा उत्तरी बंगाल पर अधिकार कर लिया। दिव्य के बाद उसका भतीजा भीम शासक बना। इसी समय रामपाल ने किसी तरह अपने को कारागार से मुक्त कर लिया। उसने राष्ट्रकूटों की मदद से एक सेना एकत्र की तथा भीम को मारकर अपने पैतृक राज्य पर पुनः अधिकार कर लिया। उसने उत्तरी बिहार तथा सम्भवतः असम की भी विजय की तथा 1120 ईस्वी तक शासन करता रहा। कुछ विद्वान् उसे ही पालवंश का अन्तिम शासक मानते हैं।

1. The reigns of Dharmpala and Devapala constitute the most brilliant chapter in the history of Bengal. Never before or since, till the British, did Bengal play such an important role in Indian politics.

—द एज ऑफ इम्पीरियल कन्नौज, पृष्ठ 52.